International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(4): 82-85

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(4): 82-85
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 16-05-2016
Accepted: 17-06-2016

डॉ (श्रीमती) वन्दना द्विवेदी
असि0 प्रोफेसर संस्कृत
श्री अग्रसेन महिला महाविद्यालय
आजमगढ़, उ0 प्र0।

Correspondence
डॉ (श्रीमती) वन्दना द्विवेदी
असि0 प्रोफेसर संस्कृत
श्री अग्रसेन महिला महाविद्यालय
आजमगढ़, उ0 प्र0।

धार्मिक सहिष्णुता के परिप्रेक्ष्य में परमसत्ता के स्वरूप का समन्वय– एक विमर्श

डॉ (श्रीमती) वन्दना द्विवेदी

हमारा देश विभिन्नताओं का देश है यह विभिन्न प्रकार के धर्म, भाषा–बोली आदि विविधताओं को समेटे हुए है। यही एक ऐसी विलक्षण विशेषता है, जो सबसे अलग भारत की पहचान विश्व पटल पर स्थापित करती है। हम सभी भारत देश के निवासी हैं, सभी धर्म–भाषा–जाति सम्प्रदाय के लोग मिलजुलकर रहते हैं, यही हमारी भारतीय संस्कृति है–

''कई रंग है कई रूप हैं, प्रान्त प्रदेश अनेक हैं।
हम भारत के रहने वाले अलग नहीं हम एक हैं।।''

अखिल ब्रम्हाण्ड के अनंत एवं अद्भुत विस्तार परिधि में परमसत्ता की श्रेष्ठ सर्जना मनुष्य सृष्टि के प्रारम्भ से ही स्वयं के विषय में, धर्म के विषय में और परमसत्ता के स्वरूप के विषय में विमर्श करता रहा है। कालान्तर में मनुष्य का यह विमर्श एक विकशनशील एवं प्रकृतिगामी परम्परा के रूप में हमारे समक्ष उद्घाटित होता है। प्रस्तुत विषय के सम्यक विवेचन हेतु धर्म, धार्मिक सहिष्णुता एवं परमसत्ता के स्वरूप का लक्षण किया जाना समीचीन है।

भारत में धर्म का प्रारम्भ ऋग्वैदिक काल से माना जाता है और यहीं से यज्ञ, मन्त्र और ऋचाओं का प्रचलन आरम्भ हुआ। इसी समय मूर्ति पूजा के साथ – साथ कर्मकाण्ड और धार्मिक अन्धविश्वासों ने भी अपना स्थान समाज में बना लिया था। ऋग्वैदिक काल के बाद भारत सहित दुनिया के अलग–अलग क्षेत्रों में कई धर्म प्रवर्तन हुए और साथ–साथ विभिन्न धर्मों एवं सभ्यताओं के मध्य अन्तःक्रिया भी आरम्भ हुई। इस तरह भारत तथा अन्य देश बहुधर्मी देश बन गये। चूँकि हिन्दू–जैन–बौद्ध–सिख आदि धार्मिक सम्प्रदायों का गठन भारत में हुआ। अतः धार्मिक विविधता का होना स्वाभाविक था। इसी समय भारत में वाह्य आक्रमणकारी के रूप में इस्लाम–ईसाई आदि धर्म के लोग भी यहाँ आते रहे और अपनी गतिविधियों से भारत की सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों के कारण अपने अपने मत का प्रचार भी किये और इस अवसर का लाभ उठाकर यहाँ की परिस्थितियों को भी प्रभावित किये। इसी कारण से आज भारत को सभी प्रकार के मतों सिद्धान्तों और मान्यताओं को समान महत्व देने वाला देश कहा जा सकता है।

भारत के पूर्ण इतिहास के दौरान धर्म का यहाँ की संस्कृति में एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है। भारत विश्व की चार प्रमुख धार्मिक परम्पराओं का हिन्दू धर्म, जैन धर्म, बौद्ध धर्म तथा सिक्ख धर्म, विश्नोई धर्म का प्रार्दूभूत स्थल रहा है। भारतीयों का एक विशाल बहुमत स्वयं को किसी न किसी धर्म से सम्बन्धित अवश्य बताता है।

'धृा' धातु से 'मन' प्रत्यय लगाकर – 'ध्रियतेलोकोऽनेन इति' धारण करने के अर्थ में 'धर्म' शब्द निष्पन्न होता है।

महर्षि कणाद के द्वारा धर्म की परिभाषा इस प्रकार दी गयी है– 'यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः'।[1] , अर्थात जिसके द्वारा मानव के अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि होती है, वह 'धर्म' है।

'धर्म' के व्युत्पत्ति लभ्य अर्थ से स्पष्ट होता है कि 'धर्म' एक धारक तत्व है जिसपर सम्पूर्ण ब्रम्हाण्ड आधृत है क्योंकि इस संसार में धारण से ही प्राणी का निर्वाह सम्भव है न केवल प्राणी का अपितु सम्पूर्ण चराचर जगत की प्रतिष्ठा धर्म पर ही आधारित है–

''धारणादधर्म इत्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः।
यस्माद् धारणा संयुक्तः सधर्म इति निश्चयः''।।[2]

वेद, स्मृति, सदाचार और आत्मतुष्टिये चार धर्म के साक्षात उपादान है– ''वेदोऽखिलो धर्ममूलम्''[3] कहकर वेदों को धर्म का मूल कहा गया है। तैत्तिरीय उपनिषद में ''ब्रम्हचारी को धर्मंचर, धर्मान्न प्रमदितव्यम''[4] कहा गया है। गीता में धर्म की सम्पूर्णता समाहित है तथा धर्म का वर्णन मुख्य है। अगर गीता के आरम्भ और अन्त के अक्षरों का प्रत्याहार बनाया जाये अर्थात आरम्भ के धर्म क्षेत्रे,(1.1) पद से ''धर्'' और अन्त के श्लोक 'मतिर्मम' पद से 'म' को लिया जाये तो 'धर्म' प्रत्याहार बन जाता है। इस प्रकार पूरी गीता ही धर्म के अन्तर्गत आ जाती है। गीता में अपने अपने वर्ण के अनुसार शास्त्र विहित कर्तव्य कर्मों को भी धर्म अथवा स्वधर्म कहा है। जो व्यक्ति अपने वर्णाश्रम और परिस्थितिजन्य कर्तव्यों को स्वधर्म मानकर पालन करता है, यह उसका 'स्वधर्म' है। जो स्वीकार किये हुए कर्म का निष्काम भाव से पालन करता है उसको परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है[5]। भगवान ने ''स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य'' (2/40) पदों से समता को 'धर्मास्यास्य' (9/3) पद से ज्ञान विज्ञान को और 'धर्म्यामृतम्' (12/20) पद से सिद्ध भक्तों के लक्षणों को भी धर्म कहा है। इनको धर्म कहने का तात्पर्य है कि परमात्मा का स्वरूप होने से समता सभी प्राणियो का स्वधर्म है। परमात्मा की प्राप्ति कराने वाला होने से ज्ञान विज्ञान भी साधक का 'स्वधर्म' है, और सिद्ध भक्तों के लक्षण भी स्वतः सिद्ध होने से स्वधर्म है।

डा0 एस राधाकृष्णन के अनुसार ''धर्म राजाओं का भी राजा है, यह लोगों का शासक है और शासकों का भी शासक है।[6]

इस प्रकार धर्म के विषय के विषय में कहा गया है– 'एवं च यो जनः धर्म पालयति, कृतज्ञ मित्रवत् रक्षितः, धर्मोऽपि तस्य पालनं करोति यश्च धर्मम् अपहन्ति । हतः धर्मश्च तं हन्ति। अत्र एवोच्यते धर्म एवं हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।

मनुस्मृतिकार के द्वारा भी धर्म का दश लक्षण बताया गया है–

'धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्''।।

इस सृष्टि के सभी ज्ञानशील व्यक्ति के आचार – विचार, आहार – व्यवहार और सदाचार का नियामक भी धर्म ही है। 'धर्म' इहलौकिक और पारलौकिक सुख प्राप्ति का साधन है। भारतीय संस्कृति में 'धर्म' शव्द अत्यन्त व्यापक अर्थों का सूचक है। धर्म ईश्वर प्रदत्त वह शाश्वत ज्ञान एवं कर्तव्य–अकर्तव्य का मार्गदर्शक विधान है जो आस्तिक और नास्तिक सभी मनुष्यों के विकास एवं कल्याण के लिए है। यह एक समतावादी, ममतावादी, सार्वभौमिक, सार्वकालिक, सत्यस्वरूप आत्मविवेक पर आधारित पक्षपात रहित तथा तर्क संगत दर्शन है। सर्वोच्च न्यायालय का आदर्श वाक्य है– ''यतोधर्मो ततो जयः'' इस आदर्श वाक्य से भी धर्म की महत्ता स्वतः ही उपादेयता को समेटे हुए प्रतीत होती है।

संसार में मुख्य रूप से चार प्रकार के धर्म प्रचलित है– सनातनधर्म, मुस्लिमधर्म, बौद्धधर्म और ईसाईधर्म। इन चार धर्मों में भी अवान्तर कई धर्म है। सनातन धर्म को छोड़कर और अन्य धर्मों पर दृष्टिपात करें तो स्पष्ट होता है कि सनातन धर्म को छोड़कर शेष तीनों धर्मों के मूल में धर्म को चलाने वाला कोई न कोई व्यक्ति मिलेगा।

जैसे मुस्लिम धर्म के मूल में मुहम्मद साहब, बौद्ध धर्म के मूल में गौतम बुद्ध और ईसाई धर्म के मूल में ईसा मसीह है। परन्तु सनातन धर्म के मूल में कोई व्यक्ति नहीं मिलेगा क्योंकि सनातन धर्म व्यक्ति द्वारा चलाया गया धर्म नहीं है। यह तो अनादिकाल से चलता आ रहा है, जैसे परमात्मा या परमतत्व सत्य शाश्वत है। भगवान कृष्ण ने भी सनातन धर्म को अपना स्वरूप बताया है–'ब्रम्हणो हि प्रतिष्ठाहं–––––– शाश्वतस्य च धर्मस्य' (गीता 14/27)। जब–जब सनातन धर्म की हानि हुई है, तब तब भगवान ने अवतार लेकर इसकी संस्थापना किया है। मुस्लिम, बौद्ध, ईसाई ये तीनों ही धर्म व्यक्ति के मस्तिष्क की उपज है, परन्तु सनातन धर्म किसी व्यक्ति के मस्तिष्क की उपज नहीं है। प्रत्युत यह बिभिन्न ऋषियों द्वारा किया गया अन्वेषण है, खोज है– ''ऋषयो मन्त्र द्रष्टारः''। यह सनातन धर्म आदि अनादि एवं शाश्वत है। अन्य सभी धर्म तथा मत मतान्तर भी इसी सनातन धर्म से उत्पन्न हुए हैं। इस प्रकार सनातन धर्म के सभी सिद्धान्त पूर्णतया वैज्ञानिक एवं कल्याण करने वाले हैं। गीता ने परमात्मा को भी सनातन कहा है– 'सनातनस्त्वम् (11/18 गीता), जीवात्मा को भी सनातन कहा है–'जीवभूतः सनातनः (15/07), धर्म को भी सनातन कहा गया है– शाश्वतस्य च धर्मस्य (14/27) अर्थात मैं अमर और अनश्वर ब्रम्ह का, शाश्वत धर्म और परम आनन्द का निवास स्थान हूँ। इस प्रकार गीता के 18/56वे श्लोक में कहते हैं कि ''शाश्वतपदम्व्ययम'' अर्थात इसका तात्पर्य है कि सनातन धर्म में सभी चीजें सनातन है। धर्म भी परमतत्व के समान है, उसी प्रकार की विशेषता धर्म की भी है, जैसी परमसत्ता की है, दोनों ही अनादि है और अनादि काल से है।

इस प्रकार धर्म के मूल तत्वों को समाहित करती हुयी धर्म की सर्वमान्य परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है। धर्म मानव जीवन के सर्वांगीण पक्ष को प्रभावित करने वाली वह व्यापक अभिवृत्ति है, जो सर्वाधिक मूल्यवान, पवित्र, सर्वज्ञ तथा शक्तिशाली समझे जाने वाले आदर्श अलौकिक उपास्य विषय के प्रति अखण्ड आस्था एवं पूर्ण प्रतिवद्धता के फलस्वरूप उत्पन्न होती है जो मनुष्य के दैनिक आचरण तथा प्रार्थना पूजा पाठ जप, तप आदि वाह्य कर्म काण्ड में अभिव्यक्त होती है। इस प्रकार सभी धर्मों में और उनके तथा कथित नियमो में एकता कदापि सम्भव नहीं है। क्योंकि धर्म इतना व्यापक है, इस व्यापकत्व में विभिन्नता होना स्वभाविक है और ये भिन्नता ऊपर से वाह्य रूप में रहती है और रहेगी ही। किन्तु आन्तरिक तत्व को देखा जाये तो प्राप्त किये जाने वाले सूक्ष्म तत्व जो विभिन्न प्रकार के मार्गों से प्राप्त है उसमें कोई भी भेद व विभिन्नता नहीं रहती है। इस प्रकार जो भेद धर्म का है वह वाह्य है तात्विक दृष्टि से कोई भेद नहीं है। स्वामी रामसुखदास अपने ग्रन्थ गीता दर्पण [7] में लिखते हैं–

पहुँचे पहुँचे एक मत अन पहुँचे मत और।
संतदास घड़ी अरठ की ढुरे एक ही ठौर।।
जब लग काँची खीचड़ी तबलगि खदबद होय।
संतदास सीज्याँ पछे खदबद करे न कोय।।

जब तक साधना करने वालों का संसार के साथ सम्बन्ध रहता है, तब तक मतभेद बाद विवाद रहता है। परन्तु तत्व की प्राप्ति होने पर तत्व भेद न होकर ऐक्य हो जाता है।

इस दुखदायी और नश्वर संसार में निश्चय ही कुछ चीजे शाश्वत एवं शान्ति दायक भी है। जो देश एवं काल की सीमाओं को पार कर हमेशा अपना महत्व बनाये रखती है। इन्हीं में से एक 'धार्मिक सहिष्णुता' भी है।

इसी क्रम में धार्मिक सहिष्णुता का अर्थ है कि जब हम विभिन्न धर्मों अथवा एक ही धर्म के अलग अलग सम्प्रदायों के अनुयायी परस्पर मिल जुलकर शान्ति पूर्वक रहते हैं और एक दुसरे के धार्मिक सिद्धान्तों, विचारों, विश्वासों तथा अनुष्ठानों के महत्व को स्वीकार करते हुए पारस्परिक विरोध या शत्रुता की भावना नहीं रखते तो उनकी इस उदारतापूर्ण मनोवृत्ति को धार्मिक सहिष्णुता की संज्ञा दी जा सकती है। 'सहिष्णुता' का अर्थ है 'सहन करना',

इसके विपरीत असहिष्णुता' का अर्थ है सहन न करना, सहिष्णुता' एक भावनात्मक सत्य है भावनात्मक में भाव शव्द महत्वपूर्ण है। भाव इन्द्रिय चेतना और मन से परे होता है। मन इन्द्रिया भाव के द्वारा क्रियान्वित होता है। भाव सबसे प्रधान एवं महत्वपूर्ण तथ्य होता है। सहिष्णुता भी व्यक्ति के शारीरिक स्वाथ्य की गति को दर्शाता है। जब व्यक्ति के सहन करने की शक्ति कम हो जाती है तथा वासना, अहंकार बढ़ जाता है तो इसका तात्पर्य है कि उसके शारीरिक स्वास्थ्य में कोई विकृति है। आयुर्वेद कहता है कि इसके लिए आहार का विवेक आवश्यक है। ऐसे आहार में वायु एवं अग्नि का संतुलन होना चाहिए क्योंकि जल तत्व अग्नि तत्व को शान्त करने वाला होता है। जैसे कि कहते हैं दिमाग गरम हो गया इसका मतलब अग्नि तत्व प्रदीप्त हो गया और दिमाग गरम हो गया। इस प्रकार दर्शन केन्द्र, ज्योति केन्द्र, शान्ती केन्द्र और ज्ञान केन्द्र ये चार मुख्य केन्द्र जहाँ ध्यान कर हम अपने नकारात्मक भावों को जैसे असहिष्णुता कपट अंहकार, लोभ, घृणा, भय, वासना आदि का सार्थक परिमार्जन एवं परिष्कार कर सकता है। इस प्रकार सभी धर्मों के प्रति सहिष्णु होना ही धार्मिक सहिष्णुता है। धार्मिक सहिष्णुता को भारत में कानून तथा समाज दोनों से ही मान्यता प्राप्त है। भारतीय संविधान में इसके प्रति प्रतिबद्धता दिखाई पड़ती है। धार्मिक सहिष्णुता सदैव से हमारे संस्कृति की विशेषता रही है। हमारे देश को इसी बातों के चलते सभी देशों से अलग विशेषता प्राप्त है सभी धर्मों के प्रति सभी जिम्मेदार शिक्षित नागरिकों को जागरूक होना चाहिए और तुच्छ मानसिकता को छोड़कर सभी धर्मों के प्रति आदर भाव रखना चाहिए किन्तु सर्व प्रथम अपने राष्ट्र की राष्ट्रीयता के विषय में सोचना चाहिए भारत में धर्म अपनी उचाईयों को छुआ है। इसने विश्व को शान्ति, सत्य और अहिंसा का उपदेश दिया है जहाँ श्री कृष्ण ने लोगों को कर्म योग का पाठ पढ़ाया और राम ने मर्यादा का आचरण सिखलाया, गौतम बुद्ध एवं महावीर ने सत्य एवं अहिंसा के मार्ग पर चलने की सीख दी कबीर ने धर्म के आडम्बर की आलोचना कर भर्त्सना किया। इस प्रकार प्राचीन ऋषि मुनियों ने अपने आचरण से तत्कालीन समाज को धर्म पर चलना सिखाया। इस प्रकार आचार्य शंकर ने भारत के सांस्कृतिक एकता की नींव मजबूत की ।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा भारतीय दर्शन एवं धर्म के बिना विश्व अनाथ हो जायेगा। प्रत्येक धर्म के दो पक्ष होते हैं – 1 श्रुति (वेद), धर्म का वह भाग है जहाँ से सभी धर्म जन्म लेते हैं। 2 स्मृति (धर्मशास्त्र), धर्म का वह रूप है जहाँ पहुँचकर सभी धर्म परस्पर भिन्न हो जाते हैं। जहाँ श्रुति सभी धर्मों को एक स्थान पर लाती है। वहीं स्मृतियाँ धर्मों को एक दूसरे से दूर ले जाती हैं। इस प्रकार श्रीराम कृष्ण और स्वामी विवेकान्नद सर्व धर्म समन्वय एवं धर्मिक सहिष्णुता पर कहते हैं कि जितने मत उतने पथ, सभी धर्म सत्य है, धर्म ही ईश्वर नहीं है, बल्कि धर्मों का सहारा लेकर ईश्वर के पास जाया जाता है। स्वामी विवेकानन्द ने 1893 ई0 में शिकागो में विश्व प्रसिद्ध भाषण दिया था उसके कुछ अंश इस प्रकार है–

> रूचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनाना पथ जुषाम।
> नृणमेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इवं।। (शिव महिम्न स्त्रोत–7)

अर्थात जिस प्रकार विभिन्न नदियां भिन्न स्रोतों से निकलकर समुद्र में मिल जाती हैं। उसी प्रकार हे प्रभो! भिन्न भिन्न रूचि के अनुसार विभिन्न टेढ़े मेढ़े अथवा सीधे रास्ते से जाने वाले लोग अन्त में तुझमें ही समाहित हो जाते हैं।

मुझको ऐसे धर्मावलम्बी होने का गौरव प्राप्त है जिसने संसार को ''सहिष्णुता'' तथा ''सब धर्मों को मान्यता प्रदान'' करने की शिक्षा दी है। हम लोग सब धर्मों के प्रति केवल सहिष्णुता में ही विश्वास नहीं करते वरन समस्त धर्मों को सच्चा भी मानते हैं। जैसा कि ऋग्वेद में कहा गया है कि ''एकं सद् विप्रावहुधा वदन्ति'', अर्थात सत्य तो एक ही है किन्तु उसको विद्वान बहुत रूपों में बताते हैं उसी प्रकार धर्म भी बहुत रूपों में है किन्तु धर्म का सूक्ष्म तत्व एक ही है।

महात्मा गाँधी तथा डॉ0 भगवान दास ने भी सभी धर्मों में एक तत्व को खोज निकालने का प्रयास किया है। उनके अनुसार ईश्वर ही ऐसा तत्व है जिसको सभी धर्म स्वीकार करते हैं। डॉ0 भगवान दास अपने पुस्तक समन्वय में लिखते हैं कि कोई नमाज के नाम से, कोई सन्ध्या के नाम से कोई प्रेयर के नाम से उसी एक परमात्मा अल्ला, गॉड को याद करते हैं। यह बात सभी मजहब वाले मानते हैं कि खुदा एक है। सबसे बडा खुदा अल्ला, अकबर, महादेव, परमेश्वर, परमात्मा, पर ब्रम्ह इन सब का अर्थ एक ही है। अगर एक मजहब वाले 'ओम' कहते है तो दूसरे 'आमी' और तीसरे 'एमेन', तीनो एक ही चीज है और एक ही मतलब रखते हैं[8]।

उपनिषदों में भी कहा गया है कि–

> गवां अनेक वर्णानां क्षीरस्थ आस्ति एक वर्णता।
> तथैव सर्व धर्माणां तत्त्वस्यऽपि एक वस्तुता ।।

अर्थात गाय बहुत रंग की, पर दूध सबका सफेद, श्वेत ही, वैसे धर्म बहुत भाषा बहुत असल बात तत्व वस्तु एक ही[9]। डॉ0 राधाकृष्णन सर्व धर्म समन्वय के विषय में कहते हैं कि विश्व के सभी धर्म किसी न किसी रूप में इसी परम तत्व की ओर बढ़ने का प्रयास करते हैं, धर्मों में जो मतभेद देखा जाता है वह उसी एक तत्व को न पहचानने के कारण ही है। वस्तुतः सभी में एक सामान्य तत्व विद्यमान है[10]।

एक सीमा के बाद हम देखते हैं कि विभिन्न धर्मों का परमसत् में समन्वय हो जाता है। क्योंकि सभी धर्म अपने वाह्य स्वरूप में भले ही अलग अलग दिखते हैं किन्तु अपने मूल रूप में जाकर एक हो जाते हैं, जो विरोध है वह वाह्य रूप में क्रियात्मक होता है। विचारात्मक या संज्ञानात्मक रूप में दृष्टिगत् नहीं होता है। विभिन्न धर्मों के पूजा स्थल मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर आदि नीचे से चाहे जिस आकृति के हैं, ऊपर की ओर अग्रसर होकर (नभ में) एक विन्दु गामी अर्थात शून्य पथगामी ही प्रायः देखे जाते हैं–

> आकाशात् पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम्।
> सर्वदेव नमस्कारं केशवं प्रतिगच्छति।।

इस प्रकार सभी धर्मों में यह मान्यता है कि सबका मालिक एक है और सबके धर्म एक ही हैं और किसी भी सम्प्रदायों के शीर्षस्थ संतो का मत भी यही है, और सभी धार्मिक सहिष्णुता की दुहाई देते हैं। महात्मा गाँधी ने कहा था – ईश्वर अल्ला तेरो नाम सबको सन्मति दे भगवान। इस प्रकार जब हम धर्म के स्थूल स्वरूप से सूक्ष्म स्वरूप की ओर अग्रसर होते हैं तो तब यह स्पष्ट होता है कि जो भी यह भेद है सापेक्ष दृष्टि के कारण है। निरपेक्ष दृष्टि से सभी धर्मों का मूल तत्व परमसत्ता एक ही है, कोई तात्विक भेद नहीं है। परमसत्ता का यह वास्तविक स्वरूप जहॉ सारा भेद समन्वित हो जाता है– ''तत्तु समन्वयात्'' धार्मिक सहिष्णुता का मूल है।

आज भौतिकवादी युग में जब धर्म का व्यापक स्वरूप अपनी संकीर्णता की ओर अग्रसर हो रहा हो तब धार्मिक सहिष्णुता के व्यापक परिप्रेक्ष्य को परमसत्ता के साथ समन्वित होना चाहिए। आज इस वर्तमान समय में धार्मिक सहिष्णुता की परमसत्ता के साथ समन्वय रूपी उपादेयता हर समय में रही है। भोगवादी और धर्मविश्रृंखल तथा उत्तर आधुनिकता से ग्रस्त समाज में जहा धर्मिक मूल्यों का अवमूल्यन मानव मूल्यों का अवमूल्यन, स्वस्थ्य परम्पराओं का ह्रास धर्म के प्रति उदासीनता किंकर्तव्य विमूढता विद्यमान है।

एतादृशी वर्तमान परिस्थिति में जहाँ धार्मिक उन्माद, धार्मिक भेदभाव, हिन्दू मुस्लिम दंगा, उदासीनता आदि की समस्या सुरसा की तरह मुँह फैलाये खड़े हों ऐसे समाज को बचाने के लिए समाज की सतत् सर्वोत्कृष्ट उन्नति के लिए धार्मिक सहिष्णुता अत्यन्त आवश्यक है। तभी व्यक्ति परिवार, समाज, राष्ट्र सभी स्तर पर सुखद एवं सार्थक परिणाम मिलेंगे । धार्मिक कट्टरता एवं संकीर्णता के इस दौर में रविन्द्रनाथ ठाकुर ने भीति के जंजाल से मुक्ति के लिए प्रार्थना की है। आज हमें इसे याद करने की आवश्यकता है–

''इस अभागे देश से, हे नाथ मंगलमय,
करो तुम दूर सब भव जाल ओछे।''

इस प्रकार वर्तमान समय में रविन्द्रनाथ टैगोर की ये पक्तियां धार्मिक सहिष्णुता को पुर्नस्थापित करने में सहायक सिद्ध होगी।

गीता का यह अद्भुत उपदेश धर्मिक सहिष्णुता का परमसत्ता के साथ समन्वय स्थापित करने का उद्घोष करता है–

''ये यथा मा प्रपद्यते तांस्तथैव भजाम्यहम।
मम् वर्त्मनानुवर्तते मनुष्याः पार्थ सर्वशः''।। (गीता – 4/11)

अर्थात जो कोई मेरी ओर आता है, चाहे किसी प्रकार से हो, मैं उसको प्राप्त होता हूँ। लोग भिन्न मार्ग द्वारा प्रयत्न करते हुये अन्त में मेरी ही ओर आते हैं।

अन्ततः

प्रभो! इस देश को सत्पथ दिखाओ
लगी जो आग भारत में बुझाओ।।
रहे सुख – शांति का इसमें बसेरा
न कुम्हलाये प्रभो ये बाग मेरा।।

जयतु संस्कृत् जयतु भारतम्

सनदर्भ ग्रन्थ सूची

1 कणाद– वैशेषिक सूत्र 1/1/2
2 महाभारत का शान्ति पर्व 108/11
3 गौतम धर्म सूत्र 1/1/2
4 तैत्तरीय उपनिषद 1/11
5 गीता 18/45
6 डॉ0 एस0 राधाकृष्णन –26 जनवरी 1949 ई0 को संविधान सभा में दिये गये भाषण का अन्त
7 रामसुखदास – गीता दर्पण – पृष्ठ – 81
8 डॉ0 भगवानदास, समन्वय पुस्तक – पृष्ठ – 247
9 डॉ0 भगवानदास, समन्वय पुस्तक – पृष्ठ – 239
10 रिकवरी आफ फेथ – पृष्ठ – 188